इकाई 13 कृषि उत्पादकता में प्रवृत्तियाँ

संरचना

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 संकल्पनात्मक विहंगावलोकन

- 13.2.1 उत्पादन बनाम उत्पादकता
- 13.2.2 आंशिक कारक उत्पादकता और कुल कारक उत्पादकता
- 13.2.3 विनिधानात्मक दक्षता और तकनीकी दक्षता
- 13.2.4 अपस्फायक और मूल्यापकर्षण
- 13.2.5 उत्पादन फलन
- 13.2.6 समोत्पाद वक्र

13.3 भारतीय कृषि में उत्पादकता

- 13.3.1 भूमि उत्पादकता
- 13.3.2 श्रम/पूँजी उत्पादकता
- 13.3.3 अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में उत्पादकता प्रवृत्तियाँ

13.4 कम उत्पादकता की समस्या

- 13.4.1 कम उत्पादकता के कारण
- 13.4.2 कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उपाय
  - 13.4.2.1 संस्थागत सुधार
  - 13.4.2.2 प्रौद्योगिकीय सुधार
  - 13.4.2.3 उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन

13.5 सारांश

13.6 शब्दावली

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- उत्पादन और उत्पादकता शब्दों के बीच अंतर कर सकेंगे;
- ''उत्पादकता'' की संकल्पना की परिभाषा, उसके संबद्ध तत्वों, जैसे आंशिक कारक उत्पादकता, कुल कारक उत्पादकता, दक्षता, आदि, के साथ कर सकेंगे;
- खाद्यान्नों के कुल उत्पादन में और भारत तथा अन्य देशों के बीच प्रमुख फसलों में उत्पादकता की तुलनात्मक परिदृश्य प्रस्तुत कर सकेंगे;
- भारतीय कृषि की भूमि/श्रमिक उत्पादकता में प्रवृत्तियों की चर्चा कर सकेंगे;

- भारतीय कृषि में अल्प उत्पादकता के कारणों की पहचान कर सकेंगे; और
- भारतीय कृषि की उत्पादकता बढ़ाने के लिए अपेक्षित उपायों की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

हम पहले ही इकाई 11 में देख चुके हैं कि आंतरिक उतार-चढ़ाव के होते हुए भी भारत ने समग्र कृषि उत्पादन के आधार पर अपने खाद्यान्न के कुल उत्पादन में सुसंगत ढंग से सुधार प्राप्त किया है। स्मरण करें, 1965-66 में भारत का कुल खाद्यान्न उत्पादन 72 मिलियन टन (Mt), 1978-79 में 132 Mt और 2008-09 में 234 Mt था (2011-12 में 250 Mt से अधिक का अनुमान लगाया गया है)। इस बढ़ती हुई प्रवृत्ति के बावजूद यह भी वास्तविकता है जब हम कई देशों से तुलना करते हैं तो भारतीय कृषि की उत्पादकता काफी कम पाते हैं। हमने इकाई 11 में भी पढ़ा है कि हरित क्रांति (GR) प्रौद्योगिकी के अधीन कुछ महत्त्वपूर्ण आदानों (अर्थात् उर्वरक और कीटनाशकों) के बढ़े हुए प्रयोग ने मृदा की उर्वरता घटाने में योगदान किया जो आगे चलकर GR क्रांति के बाद के वर्षों में कृषि उत्पादकता में अवरुद्धता/ह्रास का कारण बना। यह उपर्युक्त कुल उत्पादन से संबंधित आंकड़ों से भी स्पष्ट होता है, खाद्यान्न के उत्पादन में औसत वार्षिक वृद्धि दर तेज़ी से गिरी है। यह 1966-67 (अर्थात् 60÷13) की 13 वर्ष की अवधि में 4.6 Mt से 1979-2010 की अवधि में 2.8 Mt (86÷31) हुई। इसका अर्थ है कि यद्यपि कुल उत्पादन में वृद्धि प्राप्त करना आवश्यक है, परंतु उत्पादकता स्तर बनाए रखना या बढ़ाना, जो दक्षतापूर्वक कारक निवेश के प्रयोग से अधिक संबंधित है, समान रूप से महत्त्वपूर्ण है। दूसरे शब्दों में, यद्यपि सेक्टर की वृद्धि के लिए उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है, परंतु यह उत्पादकता/दक्षता विचार की दृष्टि से अपने आप में पर्याप्त नहीं है। इस दृष्टि से उत्पादकता संकल्पना को दक्षता के बराबर माना जाता है। हमें यह भी ज्ञात है कि भूमि और जल संसाधनों की दुर्लभता के कारण हमारा कृषि उत्पादन बढ़ाने का केवल एक ही तरीका है कि उत्पादकता वृद्धि पर फोकस करें, अर्थात् उत्पाद का स्तर बढ़ाने के लिए आदानों का इष्टतम प्रयोग करें। इस प्रकार बढ़ा हुआ कुल उत्पादन प्राप्त करने और उत्पादकता/दक्षता पर उचित ध्यान देते हुए इसे प्राप्त करने के बीच निकट संबंध है (सकारात्मक या नकारात्मक समप्रत्ययन जो परिणामस्वरूप होता है)। इस इकाई में हम उत्पादकता के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करेंगे, जैसे इसकी परिभाषा/अर्थ, घटक, मूल्यांकन के मुद्दे और वे परिवर्ती जिन पर आकलन के लिए आंकड़े अपेक्षित हैं, प्रवृत्तियां, निम्न उत्पादकता के कारण, उत्पादकता बढ़ाने के लिए आवश्यक उपाय आदि। हम अनुवर्ती भाग 13.3 में वर्णित कृषि उत्पादकता में प्रवृत्तियाँ समझने के लिए शब्दावली की संक्षिप्त संकल्पनात्मक रूपरेखा से प्रारंभ करेंगे।

13.2 संकल्पनात्मक विहंगावलोकन

उपर्युक्त प्रस्तावना हमें बताती है कि हमें सबसे पहले उत्पादन और उत्पादकता शब्दों के बीच अंतर स्पष्ट होना चाहिए। अन्य संबंधित संकल्पनाएँ भी हैं, जैसे उत्पादन, मूल्यवर्धित उत्पादन के कारक, उत्पादन फलन आदि जब हम उत्पादन मूल्यांकन या प्रवृत्ति के मुद्दे पर विचार करते हैं तो इनमें से प्रत्येक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए आइए, हम इन शब्दों के अर्थ और परिभाषा से परिचित हों।

13.2.1 उत्पादन बनाम उत्पादकता

अनुभवजन्य शब्दों में उत्पादन का संबंध स्थिति का परिणाम में व्यक्त मूल्यांकन से है, जैसे हमारी कृषि उत्पादन का कुल मूल्य। इसे या तो भौतिक माप की इकाइयों (जैसे मिलियन टन) में या उसके मौद्रिक मूल्य के आधार पर मिलियन रुपये या डालर में व्यक्त किया जाता है। इस प्रकार व्यक्त उत्पादन का मूल्य वह है जिसे हम सामान्यतया ''उत्पाद'' के रूप में उल्लेख करते हैं। उत्पाद के मूल्य की आदानों के निवल मूल्य पर अधिकता को ही मूल्य वृद्धि कहा जाता है।

दूसरी ओर, शब्द उत्पादकता का संबंध ''आदान'' से ''उत्पाद'' के अनुपात से है। इस प्रकार, प्रति हेक्टेयर कृषि उत्पादन उत्पादकता का माप है जिसमें ''उत्पाद'' कुल उत्पादन के रूप में लिया जाता है और भूमि को आदान के रूप में लिया जाता है। आदान प्रयोग में बदलाव कर उत्पाद के मूल्य में परिवर्तन प्राप्त किया जा सकता है। इस मामले में भूमि, अर्थात् आदान को स्थिर रखते हुए उत्पाद में वृद्धि उर्वरकों या खादों का प्रयोग कर या विविधीकरण या सस्य फार्म द्वारा भूमि प्रयोग के पैटर्न में परिवर्तन कर भूमि की दक्षता सुधार कर भी प्राप्त की जा सकती है। आदान स्थिर रखकर या प्रयुक्त आदान में कमी कर प्राप्त उत्पाद में वृद्धि का अभिप्राय हो सकता है कि उत्पादकता में वृद्धि है। इसे साधारण उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। माना कि उत्पादन इकाई संख्या 1 दस व्यक्तियों को लगाकर 100 रुपये मूल्य का उत्पाद उत्पन्न करता है। इकाई 1 की प्रति व्यक्ति उत्पादकता 10 रुपये है। माना कि दूसरा उत्पादन उपक्रम इकाई संख्या 2 केवल आठ व्यक्तियों को काम पर लगाता है परंतु वैसा ही उत्पाद पैदा करता है, जो 100 रुपये मूल्य है। इकाई 2 की प्रति व्यक्ति उत्पादकता 12.5 रुपये है। स्पष्ट है, इकाई 1 की अपेक्षा इकाई 2 अधिक उत्पादनकारी है। विकल्पतः यदि तरीके/कारक प्रयोग अनुपात में परिवर्तन द्वारा इकाई-1 में वही 10 व्यक्ति 125 रुपये के बराबर उत्पाद का उत्पादन कर सकें तो औसत प्रतिव्यक्ति उत्पादकता रु. 12.5 होगी, जो इकाई 2 की उत्पादकता जितनी ही बनती है। इसलिए अनिवार्यतः संकल्पना के रूप में उत्पादकता का संबंध अनुपात (उत्पाद-आदान का अनुपात) से है और यह सेक्टर या अर्थव्यवस्था में कार्य कर रही भिन्न-भिन्न इकाइयों द्वारा उत्पादन में प्रयुक्त कारकों के दक्ष प्रयोग के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकती है। हम यहाँ स्मरण कर सकते हैं कि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार श्रम और पूँजी ही उत्पादन के दो मुख्य कारक हैं। परंतु उनमें भी यह मान्यता है कि बहुत से अन्य कारक हैं जिनमें संचयी रूप में उत्पादकता पर अधिक बड़ा प्रभाव डालने की संभावना है जो उत्पादन के इन दोनों जाने-माने कारकों को भी प्रभावित कर सकते हैं।

13.2.2 आंशिक कारक उत्पादकता और कुल कारक उत्पादकता

चूंकि श्रम और पूँजी उत्पादन के दो प्रमुख कारक हैं, इसलिए ''श्रम उत्पादकता'' और ''पूँजी उत्पादकता'' के बीच अंतर साधारणतया साहित्य में किया जाता है। परंतु यद्यपि श्रम और पूँजी उत्पादन के दो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कारक हैं, यह भी सत्य है कि अन्य कारकों के समूह, जैसे औद्योगिक वातावरण, संगठनात्मक संस्कृति, शिक्षा और प्रशिक्षण, अनुसंधान और विकास, विस्तार सेवाएँ, आधारभूत संरचना, राजनीतिक स्थिरता आदि भी संचयी रूप से श्रम और पूँजी के उत्पादन में योगदान को निर्धारित करते हैं। इसे ध्यान में रखते हुए 'श्रम उत्पादकता'' (LP) और ''पूँजी उत्पादकता'' (CP)

का उल्लेख उत्पादकता के आंशिक कारक के रूप में किया जाता है और चूंकि सभी अन्य कारकों को निरुपित करने के लिए तीसरे घटक के रूप में अवशिष्ट कारकों को सम्मिलित कर जब ध्यान में रखा जाता है, तो वे अपनी समग्रता का महत्त्व दिखाते हैं। अवशिष्ट कारक का ''कुल कारक उत्पादकता'' के रूप में उल्लेख किया जाता है। सामान्यतया अनुभवजन्य प्रयोग में LP रोज़गार के लिए मूल्यवृद्धि रूप में मापा जाता है जो हमें ''प्रति व्यक्ति या प्रति कर्मचारी उत्पाद (या प्रति व्यक्ति आय की भांति आय) का सूचक प्रदान करता है समय के चलते, इसलिए LP में सुधार उस सेक्टर में कामगारों द्वारा किए गए उत्पादन के लिए योगदान के औसत स्तर में वृद्धि का निर्देशक है। ध्यान दें कि ऊपर 13.2.1 में उल्लिखित निर्देशात्मक अभ्यास में अभिकलित उत्पादकता सूचक LP है। इसी भांति CP ''पूँजी के लिए मूल्यवृद्धि'' के रूप में मापा जाता है, जिसमें हर (demonator) उत्पादन में प्रयुक्त कुल पूँजी है। इस प्रकार CP हमें उत्पादन में प्रयुक्त कुल पूँजी का प्रति इकाई मूल्यवृद्धि का माप प्रदान करता है। TFP का माप, ''संवृद्धि लेखाकरण दृष्टिकोण'' और ''अर्थमिति दृष्टिकोण'' नाम की दो विधियों द्वारा किया जाता है। हम इस इकाई में इस चर्चा के अतिरिक्त अधिक विवरण नहीं रखेंगे क्योंकि यह भारतीय कृषि में हमारे तात्कालिक फोकस बनाम उत्पादकता प्रवृत्ति की सीमा से बाहर है।

13.2.3 विनिधानात्मक दक्षता और तकनीकी दक्षता

दो परिणामों, अर्थात् उत्पाद और आदान के रूप में व्यक्त उत्पादकता सूचक में 'अंश' उत्पादन का कुल मूल्य है और हर उन आदानों का कुल मूल्य है जो इसके बनाने में काम आए हैं। हमारी मुख्य चिंता उन कारकों की पहचान करना है जो संसाधनों के प्रयोग को निष्प्रभावी बना देते हैं। फिर उन्हें न्यूनतम करने पर ध्यान देकर संसाधनों (अर्थात् आदानों का अधिक दक्षतापूर्वक प्रयोग सुनिश्चित कर उत्पाद की इष्टतम उपलब्धि प्राप्त हो पाएगी। इस परिप्रेक्ष्य से देखने पर उत्पादकता माप (या सूचक) दक्षता का संकेतक है। यदि दक्षता (अर्थात् उच्चतर उत्पादकता) संसाधनों के बेहतर आबंटन से प्राप्त की जाती है, तो यह विनिधान दक्षता कहलाती है। दूसरी ओर, यदि उत्पादकता वृद्धि उत्पादन की विधि में परिवर्तन (जैसे नई प्रौद्योगिकी का अंगीकरण या उत्पादन की विधियों का बेहतर व्यवस्था) का परिणाम है तब वृद्धि को ''तकनीकी दक्षता'' कहा जाता है। उत्पादन के संकेतकों के माप के अलावा, उत्पादकता विश्लेषण में अध्ययनों का संबंध उन कारकों की पहचान से भी है जो दक्षता के उपर्युक्त दो प्रकारों के अनुसार दक्ष उत्पादन में योगदान करते हैं। कुल सकल उत्पाद से मूल्यवृद्धि का अनुपात हमें उत्पादित सकल उत्पाद का प्रति इकाई वर्धित मूल्य बताता है। यह दक्षता का एक अन्य प्रत्यक्ष माप है। दक्षता का यह माप भारत में CSO (केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन) द्वारा उद्योगों के वार्षिक सर्वेक्षण की रिपोर्ट में प्रकाशित किया जाता है।

13.2.4 अपस्फायक और मूल्यापकर्षण

उत्पादन, मूल्यवृद्धि, मजदूरी जैसे वर्तमान या प्रचलित कीमतों में निर्दिष्ट मानों की समय-समय पर तुलना करने के लिए उन्हें तुलनीयता प्रदान करने के लिए उपयुक्त अपस्फायकों का प्रयोग आवश्यक होता है। ये अपस्फायक प्रचलित/चालू कीमतों के मानों को स्थिर कीमत मानों में परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रकार एक मानकीकृत स्थिर आधार प्राप्त हो जाता है। मूल्य द्वारा निर्दिष्ट चरों का अपस्फायन आवश्यक है क्योंकि

समय के साथ-साथ नकदी मूल्य बदलते रहते हैं। उदाहरण के लिए, 1970 में 100 रुपये और 2011 में 100 रुपये एक जैसे नहीं है, क्योंकि समय के चलते (अधिकांशतः स्फीति) कीमतों में परिवर्तन के कारण मुद्रा का मूल्य घटता है। उत्पाद मूल्य के अपस्फायन के लिए अनुभवजन्य कार्य में हम थोक मूल्य सूचकांक (WPC) का प्रयोग करते हैं। कामगारों को भुगतान के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (CDI) का अपस्फायक के रूप में प्रयोग किया जाता है। उत्पादकता अध्ययन में अपस्फायन द्वारा मूल्यांकित मानों को वास्तविक धरातल पर लाकर उनकी तुलना करना अधिक सार्थक होता है।

13.2.5 उत्पादन फलन

उत्पादन फलन एक समीकरण है जो आदानों के सभी संयोजनों के लिए कंपनी का उत्पाद विनिर्दिष्ट करता है। दूसरे शब्दों में, प्रयोगाधीन सामान्य प्रौद्योगिकी स्तर पर उत्पादन फलन हमें प्रयुक्त आदानों के विविध संयोजनों के लिए उत्पादन के संभावित स्तरों का गणितीय रूप देता है। स्मरण करें कि जब भिन्न-भिन्न कंपनियां प्रौद्योगिकी का निश्चित स्तर का प्रयोग करते हुए कार्य कर रही हैं। प्रत्येक कंपनी अपने संभावित प्रतिलाभों अर्थात् उच्चतर उत्पाद पर नज़र रखकर कारकों का प्रयोग करती है। एक कंपनी से दूसरी कंपनी की कुछ विभिन्नता होगी, क्योंकि, सभी कंपनियां एक जैसे माप ठीक-ठीक रूप में कारक आदान प्रयोग नहीं कर सकतीं। विकल्प के रूप में उत्पादन फलन की परिभाषा, उपलब्ध प्रौद्योगिकी की संभावना के अंतर्गत वस्तु की एक निश्चित मात्रा उत्पादन करने के लिए अपेक्षित न्यूनतम आदान के विनिर्देश के रूप में की जा सकती है।

उत्पादन फलन को $Q = f(X_1, X_2, ... X_n)$ के रूप में व्यक्त किया जा सकता है, यदि Q = उत्पाद की मात्रा और X_1, X_2, X_n कारक आदान की मात्रा है, (जैसे पूँजी, श्रम, भूमि, कच्च माल आदि)। उत्पादन फलन का सबसे अधिक प्रयुक्त रूप कोब डग्लस उत्पादन फलन है, जिसे $Q = aX_1^b X_2^c$ में व्यक्त किया गया है। इस फार्म का लाभ यह है कि दोनों पक्षों के लघुगणक समीकरण के चरघातांक स्वरूप को या रैखिक रूप में परिवर्तित कर देता है, जैसे $Q = a + b X_1 + c X_2 + d X_3 + ...$ जो अंतर्निहित गुणांकों का आकलन करने के लिए एक सरल स्वरूप है। उपलब्ध आंकड़ों के स्वरूप पर निर्भर करते हुए अल्पतम वर्ग सिद्धांत कहा जाता है, का प्रयोग कर, a, b, c आदि पैरामीटरों का आकलन किया जाता है। आप आकलन की इस विधि के बारे में सांख्यिकी पर अपने पाठ्यक्रम BDP की इकाई EEC 13 में अध्ययन करेंगे। हम सरसरी तौर पर उल्लेख कर सकते हैं कि यदि हमारे पास वार्षिक समय श्रृंखलाओं में सभी चरों पर आंकड़े हैं और अपने आदानों को केवल दो कारकों, अर्थात् श्रम और पूँजी तक सीमित रखते हुए और समय परिवर्ती चर के निर्देशक के रूप में t (1, 2, 3, वर्षों के अनुक्रम में लेकर सभी अन्य कारकों का निरुपण करें तो गुणांक d ''कुल कारक उत्पादकता'' का माप प्रदान करेगा। X_1 और X_2 के गुणांक, अर्थात् b और c क्रमशः परिवर्ती श्रम और पूँजी के प्राचल निरुपित करते हैं। इसके अलावा श्रम और पूँजी आंशिक कारक उत्पादकताओं का अनुमान प्रदान करते हैं, मुख्य आर्थिक महत्त्व भी वहन करते हैं। यदि दोनों गुणांकों का योग एक इकाई हो (अर्थात् $b + c = 1$) तो यह माना जा सकता है कि पैमाने का स्थिर प्रतिफल है, अर्थात्, आदानों को दुगुना करने से उत्पाद भी दुगुना-तिगुना करने पर उत्पाद तिगुना होना आदि। यदि इस मान्यता को ढील दी जाती है, अर्थात् हम इकाई से अधिक या कम मूल्य मानते हैं तो पैमाने के प्रतिफल भी स्थिर नहीं रहेंगे। यदि गुणांकों का योग 1 से

अधिक है तब इसका अर्थ है कि पैमाने का वृद्धिमान प्रतिफल होगा (अर्थात् आदानों को दुगुने करने से उत्पाद दुगुना से अधिक होगा)। यदि यह 1 से कम है तो इसका अर्थ है कि पैमाने का प्रतिफल ह्रासमान है। यह नोट करें कि 'b' श्रम के संबंध में उत्पाद की आंशिक नम्यता है, अर्थात् पूँजी आदान को स्थिर रखते हुए यह उत्पाद में प्रतिशत परिवर्तन मापता है। इसी भांति 'c' श्रम आदान स्थिर रखते हुए पूँजी आदान के संबंध में उत्पाद की आंशिक लोच है।

13.2.6 समोत्पाद वक्र

सैद्धांतिक रूप से यह समझा जाता है कि निर्धारित प्रौद्योगिकी के लिए एक विशिष्ट उत्पादन फलन विद्यमान है। उत्पादक का वांछित स्तर प्राप्त करने के लिए, आदान X_i (i=1,2…..) विभिन्न संयोजनों में प्रयुक्त किए जा सकते हैं। निश्चित प्रौद्योगिकी के लिए उत्पादन फलन वह वक्ररेखा है जो उत्पादन के एक स्तर विशेष के लिए आदानों के भिन्न-भिन्न संयोजनों को दर्शाता है। इसी विचार को एक काल्पनिक उदाहरण द्वारा अधिक स्पष्ट कर सकते हैं। तालिका 13.1 पर ध्यान दें। तालिका में दो आदानों, श्रम और पूँजी पर विचार किया गया है। उदाहरण के लिए, 200 के उत्पाद स्तर पर विचार करें जिसके लिए आदानों के तीन संयोजन विद्यमान हैं, अर्थात् (4,1), (3,2) और (1,4) ग्राफ पर इन तीनों बिंदुओं का आलेखन कर (देखिए चित्र 13.1) हमें समोत्पाद वक्र–1 (Q_1) प्राप्त होता है। इसी प्रकार, Q_2, Q_3 और Q_4 290, 345 और 450 के उत्पाद के उपज स्तरों के लिए आदान संयोजन से खींचे गऐ समोत्पाद वक्र हैं। दूसरे शब्दों में, उच्चतर समोत्पाद वक्र उत्पादन के उच्चतर स्तर निरुपित करते हैं जिससे वस्तु की कतिपय इकाइयाँ उत्पाद करने के लिए इष्टतम कारक संयोजन चुने जा सकते हैं।

तालिका 13.1: उत्पाद का स्तर दर्शाने वाला उत्पादन फलन जिसे दो निवेशों श्रम (L) और पूँजी (A) का प्रयोग कर प्राप्त किया जा सकता है

प्रयुक्त पूँजी की इकाइयाँ	नियोजित श्रम की इकाइयां						
	1	2	3	4	5	6	7
1	40	90	150	200	240	270	290
2	90	140	200	250	290	315	335
3	150	195	260	310	345	370	335
4	200	250	310	350	385	370	390
5	240	290	345	385	420	450	475
6	270	320	375	415	450	475	495
7	290	330	390	435	470	495	510

आंकड़ा स्रोत : कृषि सेक्टर के लिए श्रम या रोज़गार पर आंकड़े (विसमूहन के विभिन्न स्तरों पर अन्य सेक्टरों के लिए भी) दसवार्षिक जनगणना में, रोज़गार और बेरोज़गारी पर पंचवर्षीय NSSO सर्वेक्षण रिपोर्टों में भी उपलब्ध है। इसके अलावा सभी सेक्टरों के लिए मूल्यवृद्धि और पूँजी निर्माण पर आंकड़े CSO द्वारा प्रकाशित राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकीय (NAS) में उपलब्ध हैं। इन स्रोतों से आंकड़ा प्रयोग करते हुए मध्यवर्ती वर्षों के आंकड़ों की अंतरगणना, कीमत अंतर आदि जैसे आंकड़े आवश्यकता को समुचित ढंग से समायोजित कर हम सेक्टरों द्वारा उत्पादकता के रूझान का अनुमान लगा

सकते हैं। यद्यपि ये सरकारी एजेंसियों द्वारा एकत्र आंकड़ों के अनुपूरक स्रोत है, अनुपूरक आंकड़ों का दूसरा स्रोत CMIE (भारतीय अर्थव्यवस्था मॉनीटरिंग केन्द्र) है। यह एक प्राइवेट स्रोत हैं जो काफी अधिक लोकप्रिय हो गया है। इनके अलावा, प्रकाशित अनुमान भी है, जैसे प्रति हेक्टेयर उपज, क्षेत्रफल के अनुसार विश्व श्रेणी, बहुत से देशों के उत्पादन और उपज पर आंकड़े जो उत्पादकता प्रवृत्तियों का अंतर्राष्ट्रीय तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य प्राप्त करने में हमारी सहायता करते हैं। हम अगले भाग में कृषि सेक्टर में उत्पादकता प्रवृत्तियों का इनमें से कुछ स्रोतों से प्राप्त जानकारी के आधार पर अध्ययन करेंगे।

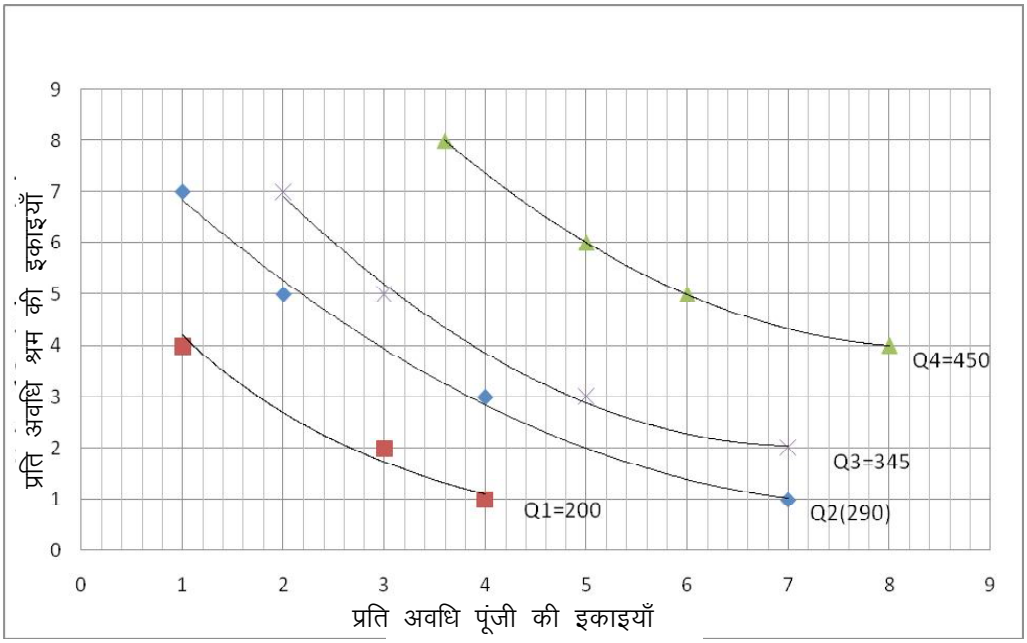

चित्र 13.2 : समोत्पाद वक्र : फर्म का उत्पादकता फलन

बोध प्रश्न 1

नीचे दिए गए स्थान में प्रश्न 2 से 4 का उत्तर लगभग 50 शब्दों में दीजिए।

1) रिक्त स्थान भरें –

क) वर्ष 1966-67 के दौरान खाद्यान्न के उत्पादन में औसत वार्षिक वृद्धि ..... mt थी। 1979-2010 की अगली तीन दशाब्दियों के दौरान यह वार्षिक वृद्धि तेज़ी से घटकर ..... mt हो गई।

ख) कृषि वृद्धि के लिए खाद्यान्न के कुल उत्पादन में वृद्धि ..... है इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण ..... में वृद्धि प्राप्त करना है।

ग) परिवर्ती चर जिसे हम कुल उत्पाद से कुल आदान घटाकर प्राप्त करते हैं ..... कहलाता है।

घ) इकाई-1, एक सौ व्यक्तियों की काम पर लगाकर 1,00,000 रुपये मूल्य की वस्तुएँ उत्पादन करती है। एक अन्य यूनिट, अर्थात् इकाई-2 पच्चीस व्यक्तियों को काम पर लगाकर उसी प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर 1,40,000 रुपये की वस्तुओं का उत्पादन करती है। इन दो इकाइयों में कौन यूनिट दूसरे की

अपेक्षा अधिक उत्पादनकारी है? इन दो इकाइयों की श्रम उत्पादकता के मान क्या है? किस प्रकार की दक्षता, विनिधान या तकनीकी ने आपके अनुसार इन इकाइयों की अधिक उच्चतर उत्पादकता में योगदान किया है।

.....

.....

.....

.....

ङ) पूँजी उत्पादकता का मूल्यांकन ..... का ..... से अनुपात के रूप में किया जाता है। सार रूप में यह हमें ..... का ..... देता है।

2) दक्षता से उत्पादकता अनुपात/सूचक को समीकृत किया जाता है। अन्य प्रत्यक्ष सूचक क्या है जिसे दक्षता के माप के रूप में जाना जाता है?

.....

.....

.....

.....

3) आंकड़ों के आधार पर उत्पादकता के मापन में मूल्य आधारित चरों का अवस्फायन क्यों आवश्यक है? किन कीमत सूचकों का उत्पाद और मज़दूरी के अवस्फायन करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है?

.....

.....

.....

.....

4) पद्धति में प्रयोग करने के लिए कॉल-डाग्लस उत्पादन फलन क्यों उपयोगी है? उसके गुणांकों का आकलन करने के लिए क्या विधि प्रयुक्त की जाती है? नियत प्रतिलाभ की अभिकल्पना पर शिथिलता कैसे प्राप्त की जाती है?

.....

.....

.....

.....

13.3 भारतीय कृषि में उत्पादकता

दो मुख्य वार्षिक प्रकाशन हैं जो उत्पादकता सूचकों के अभिकलन करने के लिए उपयोगी आंकड़े उपलब्ध कराते हैं। जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है, पहला, राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी है जो उद्‌गम के उद्योग द्वारा कारक लागत पर GDP और उद्योग

द्वारा सकल पूँजी निर्माण पर आंकड़े प्रकाशित करता है। दूसरा स्रोत आर्थिक सर्वेक्षण (ES) है जो भिन्न-भिन्न स्रोतों से प्रकाशित आंकड़ों की परितुलना करता है। ES निम्नलिखित पर भी आंकड़े प्रकाशित करता है : (i) स्थिर कीमतों और चालू कीमतों पर आंकड़ों के अलावा थोक कीमत सूचकांक (WPI) और उपभोक्ता कीमत सूचकांक (CPI), (ii) ''सभी जिन्सों के लिए सम्मिलित मुख्य फसलों के अधीन क्षेत्रफल (या आधार वर्ष के लिए 100 लेते हुए सूचीबद्ध) और (iii) खाद्यान्नों की प्रति हेक्टेयर उपज। क्षेत्रफल/उत्पादन/उपज और प्रति हेक्टेयर उपज के अनुसार मुख्य कृषि फसलों में विभिन्न देशों की विश्व क्रमिकता भारतीय कृषि सांख्यिकी (केन्द्रीय कृषि मंत्रालय द्वारा वार्षिक प्रकाशन) और CMIE द्वारा प्रकाशित किए जाते हैं। इस भाग में इन स्रोतों के आकड़ों का प्रयोग करते हुए हम उत्पादकता सूचकों, जैसे भूमि, उत्पादकता, श्रम उत्पादकता आदि के संबंध में भारतीय कृषि में उत्पादकता प्रवृत्तियों की रूपरेखा तैयार करेंगे।

13.3.1 भूमि उत्पादकता

भूमि उत्पादकता (किलोग्राम प्रति हेक्टेयर में मापी गई) दिखाती है कि ठीक 1961 से 2009 की अवधि में निरंतर वृद्धि हुई है (तालिका 13.2)। वर्ष 2010 में गिरावट अद्यतन वर्ष के अनंतिम आंकड़ों के कारण है जिसे संशोधित किए जाने की संभावना है। प्रेक्षित वृद्धि (सुनिश्चित संख्या में) दशाब्दी वृद्धि दर द्वारा सत्यापित की जानी आवश्यक है जो वार्षिक सूचक की वृद्धि का औसत निकालने पर कालांतर में बदल सकते हैं। दशाब्दी अंतरालों में परिकलित वृद्धि दरें निम्नलिखित दर्शाती है :

तालिका 13.2 : खाद्यान्नों की प्रति हेक्टेयर उपज (किग्रा/हेक्टेयर) 1961-2010

वर्ष	1960-61	1970-71	1980-81	1990-91	2000-01	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10
उपज	710	872	1023	1380	1626	1652	1715	1756	1860	1909	1798

स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण 2010-11 (तालिका A–19)

नोट : (i) CAGR (चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर) : 1971-81 : 1.6 प्रतिशत, 1981-91: 3.0 प्रतिशत, 1991-2001 : 1.7 प्रतिशत, 2001-09 : 2.0 प्रतिशत सुधारोत्तर वर्ष वृद्धि (1991-2009) : 1.7 प्रतिशत

- 3 प्रतिशत की उच्चतम वृद्धि 1981-91 (अर्थात् हरित क्रांति (GR) के बाद की दशाब्दी) में थी।
- भूमि उत्पादकता की वृद्धि दर में तीव्र गिरावट होकर 1991-2001 की अनुवर्ती दशाब्दी में यह 1.7 प्रतिशत प्रतिवर्ष रह गई। परंतु इसमें 2001-09 की अनुवर्ती अवधि के दौरान मामूली सुधार (2 प्रतिशत प्रतिवर्ष) हुआ।
- सुधारोत्तर वर्षों (अर्थात् 1991-2009) की 19 वर्ष की अवधि में औसत वृद्धि दर 1.7 प्रतिशत रही है। यह GR के बाद के वर्षों (1981-91) के दौरान के 3 प्रतिशत वृद्धि की अपेक्षा काफी कम है।

भूमि उत्पादकता अंशतः भूमि की उर्वरता और काफी हद तक प्रयुक्त प्रौद्योगिकी और आदानों पर निर्भर करती है। जैसाकि हमने पहले देखा है GR प्रौद्योगिकी ने प्रति

हेक्टेयर उत्पादकता सुधारी परंतु इसने रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग के कारण बहुत क्षेत्रों में मृदा की उर्वरकता भी प्रभावित की है। चूंकि कृष्य (कृषि योग्य) भूमि की उपलब्धता स्थिर है, इसलिए खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि केवल उत्पादकता में वृद्धि पर निर्भर रहती है। पिछली दशाब्दी (2001-09) में भूमि उत्पादकता में वृद्धि दर लगभग 2 प्रतिशत थी जो जनसंख्या की वृद्धि दर के समीप है। यह निर्दिष्ट करता है कि निकट भविष्य में भारत में खाद्यान्न उत्पादकता को कोई संकट नहीं है। परंतु कृषीतर प्रयोग के लिए भूमि पर दबाव बढ़ रहा है और जब तक बढ़ती हुई आबादी की खाद्यान्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भूमि उत्पादकता नहीं बढ़ने पर एक समस्या पैदा हो सकती है।

13.3.2 श्रम/पूँजी उत्पादकता

श्रम उत्पादकता में प्रवृत्तियां (तालिका 13.3) भी दिखाती है कि इस सबंध में चरम सीमा 1991 के इर्द-गिर्द केन्द्रित (GR के बाद के वर्षों में) थी (0.95 टन प्रतिकृषि कामगार)। सुधारोत्तर वर्षों में LP (2001 के दौरान 0.83 टन) में तेज गिरावट आई है। परंतु 2009 के बाद के वर्षों में सुधार हुआ है, और यह उसके 1991 के स्तर के बराबर है। यह नोट करना महत्त्वपूर्ण है कि (उन्नत बीजों, उर्वरकों, सिंचाई, प्रयुक्त यांत्रिक कृषि, सार्वजनिक निवेश के कारण आधारभूत संरचना सुधार आदि द्वारा) पूँजी प्रवेश का प्रभाव LP की प्रवृत्तियों में प्रतिबिंबित होता है। पूँजी उत्पादकता (CP) की प्रवृत्ति (कृषि और सहायक कार्यों के लिए कारक लागत तथा कृषि में सकल पूँजी निर्माण 2004-2005 की स्थिर कीमतों पर NAS-2010 का आंकड़े प्रयोग करते हुए) दर्शाती है कि CP 2004-05 में 8.5 से 2007 में 7.2, 2008-09 में 5.8 और 2009-10 में 5.7 प्रतिशत लगातार गिरी है। इसलिए LP और CP में प्रवृत्तियाँ सुझाती हैं कि कृषि उत्पादकता सुधारने के लिए कृषि और संबद्ध कार्यों में तथा आधारभूत संरचना में अधिक पूँजी लगाना आवश्यक है।

तालिका 13.3 : कृषि में श्रम उत्पादकता : 1961-2011

वर्ष	कुल खाद्य उत्पादन (मिलियन टनों में mt)	कृषि श्रमिकों की संख्या (मिलियन में)	श्रम उत्पादकता (टनों में)
1961	82.0	131.15	0.62
1981	129.59	147.98	0.87
1991	176.39	195.32	0.95
2001	196.81	235.06	0.83
2011	241.56	258.57(*)	0.93

स्रोत : (i) भारत के महापंजीयक, 2001 (कृषि श्रमिकों की संख्या के लिए)
(ii) कुल खाद्य उत्पादन के लिए, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार।

नोट : (i) 2011 के आंकड़ों का अनुमान 2001-2011 की अवधि के दौरान ग्रामीण आबादी में 12.18 प्रतिशत वृद्धि पर आधारित आंकड़ों में 2001 के श्रमिकों का दस प्रतिशत जोड़ कर किया गया है।
(ii) 2011 के आंकड़े प्रस्तावित अनुमानित हैं?

13.3.3 अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में उत्पादकता प्रवृत्तियाँ

विश्व स्तर पर कुल भौगोलिक क्षेत्रफल से खेती के अधीन कुल भूमि का अनुपात लगभग 32 प्रतिशत है। इससे तुलना करने पर कृषि के अधीन भारत की कुल भूमि का अनुपात 46.11 प्रतिशत से अधिक है। इस संबंध में भारत की स्थिति संयुक्त राज्य अमेरिका (40 प्रतिशत) और ब्राजील (10 प्रतिशत) जैसे देशों की अपेक्षा अधिक अच्छी है। परंतु यदि भारत द्वारा HYV बीजों से संभावित क्षमता और वास्तविक प्राप्ति की अन्य देशों से तुलना करें तो बहुत अच्छा चित्र नहीं उभरता। शीर्ष क्रमिकता वाले देशों में होने वाले उत्पादन के अनुसार प्रमुख कृषि फसलों के लिए भारत की स्थिति भी अपेक्षाकृत खराब रही है। (तालिका 13.5)। यद्यपि भारत में सभी फसलों की निम्न उत्पादकता चिंता का कारण है, यह इस तथ्य को भी स्वीकार करता है कि उत्पादकता बढ़ाने की गुंजाइश है, इससे देश की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बेहतर उत्पादकता स्तर सुनिश्चित होगी। फिर भी अंतर्राष्ट्रीय संदर्श भारतीय कृषि की उत्पादकता स्तर को बढ़ाने के लिए ध्यान देने की आवश्यकता पर बल देते हैं।

तालिका 13.4 : भारत एवं अन्य देशों में उत्पादकता

(किग्रा / हेक्टेयर)

	भारत		विश्व के सबसे बड़े उत्पादक		विश्व के सबसे अधिक उत्पादकता	
फसल	**HYV उपज की संभावना**	**वास्तविक उपज**	**देश**	**उपज**	**देश**	**उपज**
चावल	4000-5810	3,002	चीन	5,807	आस्ट्रेलिया	8,813
गेहूँ	6000-6810	2,743	चीन	3,295	आयरलैंड	7,556
ज्वार	3000-4200	1,196	संयुक्त राज्य अमरीका	3,704	इटली	5,949
मक्का	6000-8000	1,841	संयुक्त राज्य अमरीका	4,505	नीदरलैंड	25,000

स्रोत : CMIE इंडियन हार्वेस्ट, 2011।

तालिका 13.5 : प्रमुख कृषि फसलों में भारत का विश्व में स्थान

फसल	क्षेत्रफल	उत्पादन	उपज
चावल (धान)	1	2	52
गेहूँ	1	2	38
मोटा अनाज	3	4	125
दलहन	1	1	138
तिलहन	2	5	147
कपास	1	4	77
जूट	1	1	13
चाय	2	1	13
गन्ना	2	2	31

स्रोत : भारत सरकार, कृषि मंत्रालय, भारतीय कृषि सांख्यिकी, 2007।

13.4 कम उत्पादकता की समस्या

हमने ऊपर देखा है कि भारतीय कृषि की उत्पादकता विश्व स्तर की तुलना में कम है। विशेषकर तालिका 13.4 और 13.5 दर्शाती है कि यद्यपि भारत चावल और गेहूँ की खेती के अधीन क्षेत्रफल के अनुसार सर्वोच्च क्रम पर है, परंतु उपज स्तर चीन और आस्ट्रेलिया की तुलना में बहुत कम है। इसी प्रकार मोटे अनाज और फसलों के मामलों में उपजों में असमानता विद्यमान है। यहां तक कि देश में सबसे अधिक उत्पादक राज्य भी मुख्य फसलों की उपजों के आधार पर विश्व मानक से नीचे है।

13.4.1 कम उत्पादकता के कारण

कम उत्पादकता के कारणों को चार मुख्य शीर्षों में वर्गीकृत किया जा सकता है: (i) जनांकिकीय कारक, (ii) संस्थानिक कारक, (iii) प्रौद्योगिकीय कारक, और (iv) नीतिगत पूर्वाग्रह/दुर्बलता।

i) **जनांकिकीय कारक**

- भारत की कुल जनसंख्या 2001 में 1.03 अरब से बढ़कर 2011 में 1.21 अरब हो गई। परिणामतः परंपरागत और आधुनिक दोनों किस्मों के खाद्यान्नों की मांग भी अधिक बढ़ गई है। परंतु भूमि की उपलब्धता सीमित है और मृदा की उर्वरता में ह्रास हो रहा है। यह अप्रतिरोध्य जनांकिकीय स्थिति है जिसने, भूमि की उत्पादकता को 1961-2010 की अवधि में भूमि उत्पादकता में वृद्धि की प्रवृत्ति के बावजूद निम्न रहने को बाध्य किया है। अवरुद्ध हो रही श्रम उत्पादकता प्रवृत्तियां भी, विशेषकर पिछली दो दशाब्दियों में, उत्पन्न हुई हैं।

- यद्यपि औद्योगिक सेक्टर से कृषि क्षेत्र से अतिरिक्त श्रमिकों को लेने की आशा की गई है परंतु उद्योगों में अपर्याप्त रोज़गार वृद्धि के कारण आजीविका के लिए कृषि पर बहुत अधिक दबाव जारी रहा। यह इस तथ्य के बावजूद है कि कृषि में लगे हुए श्रमिकों की संख्या समय के चलते घट रही है। जोतों का विखंडन भी हो रहा है, जिससे भारत में जोतों का औसत आकार बहुत छोटा (दो एकड़ से भी कम) हो रहा है। ये आर्थिक दृष्टि से उत्पादन की आधुनिक विधियाँ अपनाने के लिए व्यवहार्य नहीं हैं। साथ ही छोटे किसानों की बहुत बड़ी संख्या की खराब आर्थिक स्थिति भी इससे जुड़ गई, जिसके परिणामस्वरूप बेहतर कृषि पद्धतियों के क्रियान्वयन में अवरोध जारी रहा। फलस्वरूप कृषि में भूमि की प्रति इकाई उत्पादकता कम है।

ii) **संस्थानिक कारक**

- स्वतंत्रता के समय भारत को अर्धसामंती कृषि ढांचा विरासत में मिला। जिसमें भूमि का स्वामित्व और नियंत्रण कुछ ज़मींदारों और बिचौलियों के नियंत्रण में केंद्रित था। भूमि सुधार करने पर पिछली छह दशाब्दियों में प्रयास भी किए गए और कुछ पहलुओं में हमें आंशिक सफलता भी प्राप्त हुई परंतु वास्तविक किसान का अधिक उत्पादन करने के लिए बाधाकारी दशाओं में कार्य करना जारी रहा।

- दूरवासी ज़मींदार की समस्या, अपेक्षाकृत बेहतर सिंचित क्षेत्रों में बढ़ती हुई

पट्टेदारी, भू-धारण की सुरक्षा का अभाव, पर्याप्त और समय पर कृषि ऋण की अनुपलब्धता, अच्छी ग्रामीण परिवहन व्यवस्था, विपणन/भंडारण सुविधा आदि के अनुसार अपर्याप्त आधारभूत संरचना आदि भी बाधक कारक बने रहे हैं। किसानों को संस्थागत ऋण की अपर्याप्तता है और उच्च लागत के अनौपचारिक ऋण पर निर्भरता बनी हुई है। ये सभी कारक मिलकर भारतीय कृषि में उच्चतर उत्पादकता प्राप्त करने में बाधक रहे हैं।

- खरीदे गए आदानों पर निर्भरता बढ़ने, नई प्रौद्योगिकी से संबद्ध जोखिमों के बढ़ने और कीमत अस्थिरता से भी फार्म सेक्टर को कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अभी हाल ही में, कुछ दृष्टान्त हुए हैं, जब किसानों ने ''बम्पर फसल और आपद विपणन'' का सामना किया है क्योंकि उसके कारण उन्हें अपर्याप्त भंडारण सुविधा के कारण कम कीमतों पर बेचना पड़ा था। इसलिए ऐसे कारक उत्पादकता बढ़ाने के लिए बाधक के रूप में कार्य करते हैं।

- विकसित देशों की भांति उद्यमिता के संवर्धन के लिए संस्थागत विकास अभी भारत में अपनी जड़े नहीं जमा पाया है। इस दिशा में, प्रगति केवल आकस्मिक उदाहरण बनकर रह गयी है। इसके प्रयास सामान्यता सभी स्थानों में होने के बदले कुछ ही पाकेट में हुए हैं। इसके विपरीत, चीन जैसे देशों ने अपने कृषि कार्य में प्रतिस्पर्धा सफलतापूर्वक लागू की है जिससे जोते छोटे आकार के होने के बावजूद दक्षता का उच्चतर स्तर प्राप्त हो सका है।

- निवेश की सामान्य रूप से कमी विशेषतः हाल ही के वर्षों में सार्वजनिक निवेश के गिरे हुए स्तर ने भारतीय कृषि में उत्पादकता का उच्चतर स्तर प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न करना जारी रखा है। कृषि, अनुसंधान और विकास में सार्वजनिक निवेश उभरती हुई चुनौतियों के अनुरूप नहीं रहा है। इसके विपरीत उन्नत बीजों में प्राइवेट व्यापार के प्रभाव ने न केवल लागत बढ़ाई है बल्कि जोखिम भी बढ़ाए हैं, जिससे छोटे-छोटे किसान उत्पादकता सुधारने के लिए उपाय आरंभ करने से भी रुक रहे हैं।

प्रौद्योगिकीय कारक

- अधिकांश भारतीय किसान अपनी गरीबी की दशा के कारण और वैज्ञानिकों तथा विस्तार कर्मियों द्वारा पहुंच की कमी के कारण नई प्रौद्योगिकी से अछूते रहे हैं। विशेषकर सुधारों के प्रवर्तन और सार्वजनिक निवेश पर वित्तीय दबाव से विस्तार सुविधाओं में गिरावट आई है। इसके परिणामस्वरूप, वे परंपरागत कम उपज देने वाली विधियों से ही कार्य करते हैं। दूसरे शब्दों में, आधुनिक आदानों और विधियों की अपर्याप्त उपलब्धता कम उत्पादकता का कारक रहा है।

- सिंचाई सुविधाओं का विस्तार करने में किए गए समस्त प्रयासों और निवेशों के बाद भी कुल कृषि सेक्टर के 50 प्रतिशत से भी कम में सिंचाई सुविधाएँ सुलभ हैं। निश्चित सिंचाई सुविधा की कम सुलभता के कारण अनिश्चित मानसून पर निर्भरता कृषि में कम उत्पादकता का स्थायी कारण रहा है।

- कटाई के बाद की अपर्याप्त और घटिया प्रौद्योगिकी (जिसके कारण अनुमानतः 30 प्रतिशत कृषि उत्पादों की हानि होती है) उत्पादित कृषि उत्पाद की संभावित कीमत प्राप्त करने की प्रमुख बाधा है।

- बहुत दशाब्दियों में प्रौद्योगिकीय क्षेत्र में कोई प्रमुख पहल नहीं हुई है। इसे ''प्रौद्योगिक थकान'' कहा जाता है। यह भी देश में कृषि उत्पादकता की अवरुद्धता का एक बड़ा कारण रहा है।

नीतिगत पूर्वग्रह/दुर्बलता

- उद्योग पक्षपाती नीति पर अत्यधिक निर्भरता की पूर्वाग्रही नीति से भारतीय कृषि ग्रस्त रही है। उद्योग के संवर्धन में राज्य की सहभागिता कृषि की तुलना में बहुत अधिक थी। उद्योग को प्रारंभिक अवस्था में प्रदान किए गए अधिक संरक्षण ने निजी निवेश को कृषि की अपेक्षा उद्योग की ओर अधिक प्रोत्साहित किया।

- आधारभूत संरचना विकास भी कृषि की अपेक्षा उद्योग के पक्ष में उसी प्रकार अधिक पूर्वाग्रह ग्रस्त रहा (इस तथ्य के बावजूद कि कृषि सेक्टर के भी बहुत मामलों में नीतिगत समर्थन मिला)। यहां तक कि 2007 के हाल ही के (अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान द्वारा) किए गए अध्ययन ने प्रमाणित किया है कि भारत में कृषि की सहायता सामंजस्यहीन रही है और अधिकांशतः विश्व कीमतों के उच्चावचन के प्रतिकूल रही है। तात्पर्य यह है कि कृषि सहायता तब बढ़ाई गई जब विश्व कीमतें अपेक्षाकृत कम थीं और तब घटाई गई जब विश्व कीमतें ऊंची थीं।

13.4.2 कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उपाय

स्वाभाविक रूप से यह परिणाम निकलता है कि कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उपायों का उल्लेख भी निम्न प्रकार से हो सकता है : (i) संस्थागत, (ii) प्रौद्योगिकीय और (iii) आवश्यक प्रोत्साहन संरचना। संक्षेप में, इन्हें इस प्रकार प्रतिपादित किया जा सकता है :

13.4.2.1 संस्थागत सुधार

- भूमि सुधारों, पर्याप्त कृषि वित्तीयन की व्यवस्था, प्रौद्योगिकी रूप में उपयुक्त विधियों के लिए कृषि आदानों के अधिक व्यापक और न्याय संगत वितरण के माध्यम से बेहतर कृषि संबंधों की स्थापना कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए अनिवार्यतः आवश्यक है। यह उल्लेख करना महत्त्वपूर्ण है कि यद्यपि बहुत-सी संस्थागत व्यवस्थाएँ पहले ही विद्यमान हैं, किंतु उनका क्रियान्वयन इतना प्रभावोत्पादक नहीं रहा है। इस पक्ष पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

- संस्थागत सुधार के एक अन्य प्रमुख पहलू का संबंध वितरण प्रणाली की दक्षता सुधारने से है। इसमें समग्र ग्राम विकास उपाय और लोकतांत्रिक संस्थाओं, जैसे पंचायती राज का शक्तीकरण सम्मिलित है। इसके लिए आवश्यक संसाधनों के हस्तांतरण सहित आर्थिक और सामाजिक विकास के कार्यों का समुचित अंतरण अपेक्षित है।

13.4.2.2 प्रौद्योगिकीय सुधार

प्रौद्योगिकीय सुधारों को दो शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः (i) जैविक और (ii) अन्य। जैविक नवप्रवर्तन का संबंध उन कारकों पर फोकस करना है जो अधिक भूमि उत्पादकता तय कर सकते हैं। इसका अभिप्राय भूमि बचत तरीके और कार्यप्रणाली

(जैसे बेहतर बीजों और उर्वरकों) का स्वरूप है जो पर्यावरण की दृष्टि से धारणीय है। अन्य नवप्रवर्तनों में निम्न प्रकार के कई घटक हैं:

- यह केवल तकनीकी जानकारी नहीं है जो गरीब किसानों की सहायता करती है। उन्हें सहयोगशील उत्पादों जैसे आदान आपूर्तियाँ, विस्तार सेवाएँ, ऋण सुविधा, कटाई के बाद सहायता (जैसे भंडारण/विपणन) आदि की आवश्यकता होती है। कृषि सेवा केंद्र, परामर्शदाताओं को पारिश्रमिक पर रखते हैं और छिड़काव करने वाली मशीनों (Spayer) ट्रैक्टर और गहाई मशीन (थ्रेसर) आदि की आपूर्ति करते हैं। पूरे देश भर में व्यापक रूप से इनका विस्तार होना चाहिए। संपूरक उपायों के रूप में सहकारी समितियों को इसी प्रकार राष्ट्रव्यापी आधार पर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ये ताइवान, जैसे देशों में दक्षतापूर्वक कार्य कर रही हैं। इन सेवाओं के अभाव में, प्रयोगशालाओं में विकसित फसल उत्पादन की आधुनिक तकनीकें अपनाने की भारतीय किसानों की क्षमता को नहीं बढ़ाया जा सकता है और इसके अभाव में, भारतीय कृषि की उत्पादकता बढ़ाना संशयपूर्ण बना रहेगा।

- अनुसंधान के प्रतिलाभ उच्च माने जाते हैं। इस दृष्टि से अनुसंधान प्रयासों को उन विधियों और कार्यप्रणालियों पर केन्द्रित किया जाना चाहिए, जिन्हें छोटे फार्मों और शुष्क क्षेत्रों में प्रयुक्त किया जा सके। परंतु चूंकि निम्नतर सीमा है जिसके परे प्रौद्योगिकी और पूँजी प्रधान कार्यप्रणालियों की प्रयोज्यता आर्थिक रूप में व्यावहार्य नहीं रह पाती है, इसलिए छोटे-छोटे भूखंडधारी गरीब किसानों की सहायता करने के लिए उनके संसाधनों को इकट्ठा कर तथा साथ मिलकर कार्य करने के लिए आवश्यक संस्थागत क्रियाविधि स्थापित करना आवश्यक है। अनुसंधान का विषय फार्म प्रबंधन सहित खाद्यान्न पादप प्रजनन और अन्य फसलों के लिए होना चाहिए। भूमि प्रबंधन, कृषि पद्धतियाँ कृषि वानिकी के सभी पहलुओं पर प्रयुक्त जानी चाहिए। निजी अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के लिए समुचित नीति परिवर्तन करना भी आवश्यक है क्योंकि इन दिनों हम केवल सार्वजनिक निवेश पर पूरी तरह से निर्भर हैं, जो न केवल अव्यावहारिक है, बल्कि, वे उत्पादकता बढ़ाने में सहायता नहीं कर पाते हैं। चूंकि भारत में सामाजिक आर्थिक विकास के वर्तमान स्तर पर कृषि सेक्टर में गरीब और सीमांत किसानों की संख्या बहुत अधिक है, इसके लिए वांछित किस्म के संस्थागत विकास को सरकार द्वारा प्रोत्साहित करना आवश्यक है। राज्य को समाज की दक्षता और न्यायसंगत समस्याओं के नियामक के रूप में बड़ी भूमिका स्वीकार करनी चाहिए।

विकास में उत्पादन और उत्पादकता सुधारने में उन IT (अर्थात् सूचना प्रौद्योगिकी) में विधियों के बेहतर प्रयोग पर अधिक बल दिया जाना चाहिए जिनमें पारिस्थितिकीय दृष्टि से युक्तियुक्त प्रणालियां अंतर्निहित हों, जैसे एकीकृत गहन कृषि पद्धतियां, ई-चौपाल का विस्तार, कृषि कार्यप्रणालियों के महत्त्व की दूरवीक्षण आंकड़ों (सुरक्षा संवेदी मानचित्र, आंकड़ों के मामले छोड़कर) की सुलभता/प्रयोग में बाधाएँ हटाना, आदि। इस समय ई-चौपालों की परियोजनाएँ केवल कुछ ही राज्यों में कार्य कर रही हैं, सभी राज्यों में इसका विस्तार किया जाए।

13.4.2.3 उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन

छोटे फार्मों की उत्पादकता सुधारना : इस संबंध की मुख्य चुनौती है कि भारत में 80 प्रतिशत भूमि जोत आकार में 2 हेक्टेयर से कम है। जब तक कारक उत्पादकता

नहीं बढ़ायी जाती है, तब तक छोटे फार्म पर आधारित कृषि अलाभकारी ही रहेगी। परंतु फार्म जितने छोटे होंगे, अधिक नकदी प्रतिलाभ प्राप्त करने के लिए पण्य अधिशेष की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी। इसलिए एकल विकास रणनीति के रूप में छोटे फार्म उत्पादकता सुधार उत्पाद/उत्पादकता बढ़ाने और भूख तथा गरीबी उन्मूलन दोनों के लिए सबसे अधिक योगदान कर सकता है। देश भर में छोटे किसानों को आधुनिक आदानों जैसे, उर्वरकों, कीटनाशकों और उचित मूल्य पर उन्नत बीजों की उपलब्धता इस संबंध में अति आवश्यक है। कीमतों और गैर कीमती पहलुओं पर अन्य उपाय अत्यधिक आवश्यक हैं। ये उपाय निम्नलिखित हैं:

- प्रभावशाली फसल बीमा योजनाओं से कृषि के प्रतिलाभ (विशेषकर वर्षा निर्भर क्षेत्रों में) स्थिर करना।

- उत्पादन के पैमाने को सुधारना (संसाधनों को मिलाते हुए आधुनिक आदानों और विधियों का प्रयोग कर उत्पादकता बढ़ाने में जिसे प्रमुख दबाव के रूप में कार्य करने वाला जाना जाता है)। कुछ कृषि कार्यों की समस्या हल करने के लिए इकाई 5 में पहले उल्लिखित सार्वजनिक भूमि बैंक की आवधारणा का क्रियान्वयन गंभीरता से किया जाए।

- किसानों को बेहतर आदानों और प्रौद्योगिक सुलभता प्रदान कर ''संविदा खेती'' द्वारा उद्योग कृषि संबद्धता प्रोत्साहित की जाए। साथ ही अच्छी गुणवत्ता के कच्चे माल की निरंतर आपूर्ति प्राप्त करने में निगमित सेक्टर की भी सहायता ली जा सकती है।

- उर्वरक उद्योग को तर्कसंगत बनाने तथा पुनःसंरचना करके कृषि के सुधार को औद्योगिक सुधारों के अनुरूप बनाना। किसानों से यह आशा करना अवास्तविक है कि वे उच्चतर संरक्षण और उर्वरक उद्योगों की उस अदक्षता के परिणामों का दंड भुगतें (जो अपने विस्तार का संवर्धन करने के लिए अपनाई गई पिछली संरक्षात्मक नीतियों के कारण पहले से आरंभ हो चुकी है)।

- सार्वजनिक प्रापण और मूल्य समर्थन नीतियों का पुनःविन्यास तथा उनके उद्देश्यों के बेहतर रूप से पुनः प्रारंभ करने की व्यवस्था करना। इन वितरण केन्द्रों को भेजा गया प्रचुर खाद्य भंडार भ्रष्टाचार और अदक्षता से नष्ट किया गया है, इससे मांग और आपूर्ति के काल्पनिक बेमेल को संपूर्ण प्रणाली को भुगतना पड़ता है।

- सुधारों के स्वरूपों के माध्यम से बिजली और सिंचाई साहाय्य समाप्त करना जो निम्न लागत वसूली और खराब वित्तीय निष्पादन के निहित कारणों को दूर कर सकते हैं।

- प्रख्यात कृषि अर्थशास्त्री शूहल्ज ने छह दशकों से भी अधिक में प्रेक्षण किया है कि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में गरीब किसान समझदार होते हैं इन्हें अपनी समझदारी का लाभ उठाने के लिए केवल उचित ढंग से सहायता करने की आवश्यकता है। इस तर्क का विस्तार करते हुए यह कहा जाता है कि किसानों को उनके कल्याण संबंधी विकास कार्यों के विभिन्न स्तरों पर शामिल किया जाना चाहिए। विशेषकर निर्णय करने वाले निकायों, जैसे निवेश आपूर्तिकर्त्ता एजेंसियों और उत्पाद विपणन बोर्डों में उनके उचित प्रतिनिधित्व को प्रोत्साहित किया जाना

चाहिए ताकि वे सेक्टर की समग्र लाभकारिता बढ़ाने और बेहतर संसाधन दक्षता के लिए उत्प्रेरक के रूप में कार्य कर सकें।

- यह भी तर्क दिया जाता है कि यदि किसानों को अपने अल्प संसाधनों को अपनी भूमि पर निवेश करने तथा समन्वित तरीके में कार्य करने के लिए अभिप्रेरित किया जाता है तो सहायता के रूप में किसी भी अतिरिक्त सरकारी निवेश के बिना सेक्टर का उत्पाद दुगुना किया जा सकता है। इसके लिए ऐसी नीतियों और उपायों में लोगों की सहभागिता का संवर्धन आवश्यक है जिनके द्वारा हमारे पूर्व एशियाई पड़ोसी अपनी वर्तमान ऊँचाइयों पर पहुंचे हैं। यदि उत्पादकता स्तर बढ़ाकर खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के अधिकार प्राप्त किए जाने हैं तो भारत को अगली 2 से 3 दशाब्दियों के दौरान इस क्षेत्र पर गंभीर रूप से कार्य करना आवश्यक है।

- बढ़ी हुई कृषि उत्पादकता के लिए इस समय की तुलना में विस्तारित और आधुनिकीकृत कृषि सेक्टर में बहुत अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होगी। दूसरे शब्दों में, कृषि में घटते हुए श्रमबल के शेयर से बढ़ा हुआ कृषि स्तर न केवल किसानों का आय स्तर सुधारेगा बल्कि कृषीतर सेक्टर में अतिरिक्त रोज़गार भी उत्पन्न करेगा। इसके लिए इस सेक्टर को केवल सही दृष्टिकोण से (जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है) आधुनिकीकृत होना आवश्यक है। इसमें वास्तविक चुनौती निहित है जिसे किए जाने की तुलना में कहना आसान है।

बोध प्रश्न 3

नीचे दिए गए स्थान में लगभग 50 शब्दों में प्रश्न 2 से 6 के उत्तर दीजिए।

1) रिक्त स्थान भरिए –

   क) कृषि में अभी तक प्राप्त उच्चतम वृद्धि दर ..... प्रतिशत है और यह अवधि में ..... रही है।

   ख) कृषि में सुधारोत्तर वृद्धि 1991-2001 के दौरान ..... प्रतिशत और 2001-2009 के दौरान ..... प्रतिशत है।

   ग) भारत में अभी तक प्राप्त कृषि में उच्चतम श्रम उत्पादकता ..... टन है। यह 2001 में ..... टन तक घट गयी परंतु पुनः 2011 में ..... तक बढ़ गयी।

   घ) वर्ष 2008-09 के दौरान कृषि में पूँजी उत्पादकता में निरंतर ..... की प्रवृत्ति रही है।

2) किस प्रकार से भारत में वर्तमान जनांकिकीय स्थिति भूमि उत्पादकता निम्न रखने में बाधक रही है?

.....

.....

.....

.....

3) उद्योग की तुलना में कृषि वृद्धि को दुष्प्रभावित करने वाले नीति पूर्वाग्रह को प्रमाणित करने वाले किन्हीं दो कारकों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

4) भारतीय कृषि उत्पादकता सुधारने के लिए जैव नवप्रवर्तन का ध्यान किस ओर केन्द्रित करना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

5) क्या आप सहमत है कि कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए ''अनुसंधान'' पर बल महत्त्वपूर्ण है? जिनसे इस प्रकार के प्रयासों की दिशा के विषय में आप क्या सुझाव देंगे?

.....

.....

.....

.....

6) कीमत और कीमत इतर उपायों के क्षेत्रों में से एक उदाहरण दीजिए जिसे आप अधिक उत्पादकता पथ पर भारतीय कृषि के मार्ग निर्धारित करने के लिए अत्यंत आवश्यक समझते है।

.....

.....

.....

.....

13.5 सारांश

भले ही, लगभग छह दशकों की लंबी अवधि में भारत में कुल कृषि उत्पादन नियमित रूप से बढ़ा है, सापेक्ष शब्दों में, कृषि उत्पादकता अवरुद्ध/ह्रासमान रही है। इसके अलावा, अन्य विकसित देशों की तुलना में भारतीय कृषि के उत्पादकता स्तर बहुत

निम्न हैं। हमारी जनसंख्या निरंतर बढ़ रही है, और खाद्य आवश्यकताओं/किस्मों की अधिक भारी मांग पैदा कर रही है। ''खाद्य सुरक्षा'' के लिए हमारी बढ़ती हुई चिंता का समाधान केवल कृषि उत्पादकता के स्तर बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित कर हो सकता है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए जिन उपायों को किए जाने की आवश्यकता है, वे संस्थागत, प्रौद्योगिकीय, कीमत और कीमत इतर क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। इस इकाई में संबंधित संकल्पनात्मक सैद्धांतिक और अनुभवजन्य आयामों को ध्यान में रखकर इन पहलुओं का विवेचन किया गया है।

13.6 शब्दावली

उत्पादकता : इसका संबंध आदान से उत्पादन के अनुपात से है। यह एक सापेक्ष चित्र प्रस्तुत करता है, जिसमें सुस्पष्ट शब्दों में समय के चलते उत्पाद बढ़ रहा हो सकता है, परंतु उत्पादकता के आधार पर यह ऐसा नहीं हो सकता है। विशेषकर भूमि उत्पादकता, श्रम उत्पादकता और पूँजी उत्पादकता का संबंध उस उत्पाद की प्रति इकाई से है जिसमें भूमि, श्रम और पूँजी क्रमशः माने गए कारक आदान हैं।

कुल कारक उत्पादकता : यद्यपि श्रम और पूँजी उत्पादन के दो मुख्य कारक हैं, ये अनेक अन्य कारकों के साथ मिलकर (जो इतनी आसानी से अभिज्ञेय नहीं है। उत्पादकता का स्तर या उत्पादकता प्रतिलाभ निर्धारण कराते हैं। ये शिक्षा और प्रशिक्षण, औद्योगिक वातावरण, राजनीतिक स्थिरता आदि हैं। यह अनुभव रहा है कि TFP से समग्र उत्पाद का योगदान दो मुख्य कारक निवेशों जैसे श्रम और पूँजी की अपेक्षा बहुत अधिक है। परंतु TFP के मूल्यांकन के लिए कीमत आधारित चरों जैसे उत्पाद, मूल्यवृद्धि आदि का अपस्फायन करने में प्रयुक्त आंकड़ों की बहुत (जैसे मूल्य सूचकांक की) आवश्यकता होती है।

वृद्धि दर : यह अवधि के दौरान (जैसे दशाब्दी में) प्रति वर्ष औसत वृद्धि के एकल सूचक के लिए प्रयुक्त किया जाता है। चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर या CAGR फार्मूला : $P_n = P_o (1 + r/100)^n$ प्रयोग कर प्राप्त किया जाता है यहा P_o आधार/प्रारंभिक वर्ष में मान है, P_n n^{th} वर्ष में मान है, 'n' उन वर्षों की संख्या है जिनके दौरान वृद्धि दर निर्धारित करने का प्रयास किया गया है और 'r' परिकलित की जाने वाली वृद्धि दर है। माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल में फार्मूला : = दर $(n_{,,} – P_{o5} – P_n) \times 100$ से

'r' का मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। ध्यान रखें कि 'n' के बाद दो कॉमा (,,) है और ''minus'' चिन्ह P_o से पहले है। प्रतिशत वृद्धि दर प्राप्त करने के लिए 100 से गुणा किया गया है। तालिका 13.2 में दिए गए आंकड़ों का प्रयोग कर आप साधारण औसत/वार्षिक वृद्धि दर की गणना कर सकते हैं और देख सकते है कि इसका मूल्य (मान) CAGR से थोड़ा ही अधिक होगा।

समोत्पाद वक्र : किसी प्रौद्योगिकी विशेष के अनुरूप उत्पादन फलन वक्र है। दो आदान स्थिति में इसे रेखाचित्र के रूप में समझा जा सकता है, जिसमें एक आदान (माना कि श्रम) की मात्रा लेकर अंकित किया जाता है। एक आदान X-अक्ष पर मापा जाता है और दूसरा आदान (अर्थात् पूँजी) Y-अक्ष पर मापा जाता है। इस प्रकार, यदि दो आदानों के भिन्न-भिन्न संयोजनों का प्रयोग करते हुए उत्पाद का एक निश्चित स्तर प्राप्त होने की बहुत सी संभावनाएँ होती हैं, हम दो आदान मूल्यों के भिन्न-भिन्न युग्मों के एकसमान उत्पादन करने वाले बिंदुओं को जोड़कर वक्र रेखा खींच सकते हैं। यह अंदर की ओर उभार दिखाने वाली वक्र रेखा समोत्पाद वक्र कहलाती है।

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Mark W. Rosegrant and Robert E. Evenson, Total Factor Productivity and Sources of Long-Term Growth in Indian Agriculture, EPTD Discussion paper No. 7, International Foold Policy Research Institute (IFPRI), 1995.

Renuka Mahadevan, Productivity Growth in Indian Agriculture: The Role of Globalization and Economic Reforms, Asia-Pacific Development Journal, Vol. 10, No. 2, 2003.

Sundaram, K.P.M., Gaurav Datt and Ashwani Mahajan, Indian Economy, Part 3: Agricuture in the National Economy, S. Chand Group, New Delhi, 2011.

WTO and Indian Agriculture: Implications for Policy and R&D, Policy Paper, 38, National Academy of Agricultural Sciences, New Delhi, 2006.

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) क) और ख) के लिए देखिए भाग 13.1 और उत्तर दीजिए।

ग, घ और ङ के लिए, भाग 13.2 देखिये और उत्तर दीजिए।

2) देखिए उपभाग 13.2.3 और उत्तर दीजिए।

3) देखिए उपभाग 13.2.4 और उत्तर दीजिए।

4) देखिए उपभाग 13.2.5 और उत्तर दीजिए।

बोध प्रश्न 2

1) क और ख के लिए देखिए उपभाग 13.3.1 और उत्तर दीजिए।

   ग और घ के लिए देखिए उपभाग 13.2.2 और उत्तर दीजिए।

2) देखिए उपभाग 13.4.1 और उत्तर दीजिए।

3) देखिए उपभाग 13.4.1 और उत्तर दीजिए।

4) देखिए उपभाग 13.4.2.2 और उत्तर दीजिए।

5) देखिए उपभाग 13.4.2.2 और उत्तर दीजिए।

6) देखिए उपभाग 13.4.2.3 और उत्तर दीजिए।